जनसंख्या नियंत्रण
कितनी आवश्यकता, कितनी राजनीति

संगीता मौर्य व ईशा सारस्वत

चतरा, झारखण्ड में टार्च की रोशनी में महिला नसबंदी (9 जनवरी, दैनिक जागरण); आज़मगढ़, उत्तर प्रदेश में टार्च और मोबाइल की रोशनी में नसबंदी (28 फ़रवरी, हिन्दुस्तान, वाराणसी); नसबंदी के 4 वर्ष बाद महिला गर्भवती (22 मार्च, हिन्दुस्तान, मिर्ज़ापुर); बंध्याकरण के बाद महिला की मृत्यु (29 मार्च, दैनिक जागरण, वाराणसी)।

उपरोक्त घटनाओं की ही तरह की कई अन्य घटनाएं पिछले 4-5 महीनों से अख़बारों के पन्नों पर कभी मुख्य पृष्ठ पर तो कभी कहीं किसी कोने में यदा-कदा अपनी जगह बना ही ले रही हैं। इस तरह की घटनाओं को प्रिन्ट और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में जगह मिलने के पीछे भी बिलासपुर की घटना का बहुत बड़ा हाथ है। यदि बिलासपुर में 8 व 10 नवम्बर 2014 को हुए नसबंदी कैंप के बाद 13 स्वस्थ महिलाओं की मृत्यु न होती तो शायद ही ये घटनाएं प्रिन्ट व इलेक्ट्रॉनिक मीडिया की ख़बर बनतीं।

शायद बहुत सारे लोगों ने इस तरह की घटनाओं के बारे में पहली बार सुना होगा। पर क्या इस तरह की घटनाएं पहली बार हो रही हैं। बिल्कुल भी नहीं। इस तरह की घटनाएं होती रहती हैं, पर चूंकि बिलासपुर की तरह 13 स्वस्थ महिलाओं के एक साथ एक-दो दिनों के अन्दर मरने की घटनाएं रोज़ नहीं होती हैं, इसलिए वे ख़बरें मीडिया को आकर्षित नहीं कर पाती हैं।

यदि हम पिछले 30 सालों का जनसंख्या नियंत्रण के आंकड़ें देखें तो यह बिल्कुल स्पष्ट है कि जनसंख्या नियंत्रण के नाम पर भारत में 95-97 प्रतिशत महिला नसबंदी होती है (स्रोत: एच.एम.आई.एस. पोर्टल, भारत में स्वास्थ्य और परिवार कल्याण के आंकड़े, 2013)। सरकार द्वारा बाकायदा महिला नसबंदी को बढ़ाने के लिए पूरी ताक़त से प्रचार-प्रसार किया जाता है। हॉलांकि भारत ने जनसंख्या और विकास के अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन 1994 में ही यह वादा किया था कि जनसंख्या नियंत्रण दृष्टिकोण के बजाय गर्भ निरोधन में पुरुषों की ज़िम्मेदारियों पर और किशोरों की ख़ास ज़रूरतों पर विशेष ध्यान दिया जायेगा। राष्ट्रीय जनसंख्या नीति 2000 के माध्यम से भी सरकार ने एक भयमुक्त, लक्ष्यमुक्त प्रक्रिया को अपनाने की बात कही है।

परन्तु आई.सी.पी.डी. 1994 में किए गए वादे के 24 वर्ष और राष्ट्रीय जनसंख्या नीति 2000 के 14 वर्ष पूरे होने के बावजूद भी सरकार के रवैये में कोई बदलाव नहीं आया है। बिलासपुर नसबंदी कैंप की भयावह घटना इसका जीता-जागता उदाहरण है। आज भी गर्भनिरोध कार्यक्रमों में पुरुषों की भूमिका नाम मात्र है। यह जानते हुए भी कि पुरुष नसबंदी महिला नसबंदी से कई गुणा सुरक्षित एवं आसान है। आज भी महिलाओं को ही लक्ष्ययुक्त कार्यक्रम का निशाना बनाया जा रहा है।

शारदा की कहानी

शारदा (बदला नाम) का नसबंदी ऑपरेशन मुज़फ्फरनगर कैम्प के दौरान हुआ था। इन्जेक्शन लगाकर ऑपरेशन के लिए उसे बेड पर लिटाया गया। ऑपरेशन के दौरान शारदा ने डॉक्टरों को आपस

में चर्चा करते हुए सुना कि उसकी नस ही नहीं मिल रही है। जैसे-तैसे ऑपरेशन हो गया। ऑपरेशन के बाद शारदा ने कपड़े खुद ही पहने। पी.एच.सी. से शारदा को घर पर एम्बुलेंस से वापस भेजा गया। 12:50 पर शारदा का ऑपरेशन हुआ और पांच बजे शारदा अपने घर पर थी।

नसबंदी के बारे में सही जानकारी न होने के कारण ऑपरेशन के आठ दिन बाद ही उसके पति ने यौन सम्बन्ध बनाने के लिए कहा। मना करने के बाद भी शारदा के पति ने ज़बरदस्ती सम्बन्ध बनाया।

उसके अगले दिन ही शारदा को लगा कि उसका टांका टूट गया है क्योंकि उसे दर्द होने लगा। जब वह टांका कटवाने के लिए पुरकाजी पी.एच.सी. पर गई तो जो कम्पाउंडर चोट पर पट्टी करता है उसने ही टांके काटे। शारदा को कोई अन्य दवा नहीं दी गई। जब शारदा के टांके कटे तो टांकों से खून व मवाद निकल रहा था। आशा ने ज़बरदस्ती शारदा से उस टांके काटने वाले को पचास रुपये भी दिलवाये।

अभी भी शारदा की तबियत ठीक नहीं रहती है और टांके वाली जगह पर दर्द रहता है।

एक ओर जहां इस तरह लक्ष्य आधारित कार्यक्रमों के साथ कैंपों के माध्यम से महिला नसबंदी भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14 (समानता का अधिकार), अनुच्छेद 21 (सम्मानपूर्वक जीवन जीने का अधिकार) का हनन करता है वहीं दूसरी ओर यह महिला के यौनिक व प्रजनन संबंधी अधिकारों का भी हनन है।

आज वर्तमान में जब भारत की 50 प्रतिशत से ज़्यादा जनसंख्या 25 वर्ष के उम्र की है और 65 प्रतिशत से ज़्यादा जनसंख्या 35 वर्ष से कम उम्र की है, ऐसे में केवल नसबंदी को गर्भनिरोध के माध्यम की तरह प्रचलित करना कितना प्रासंगिक है यह सोचनीय विषय है। युवा आबादी के समक्ष 'बास्केट ऑफ़ च्वाइस' (निरोध, ओरल पिल्स, आई.यू.डी.) के कॉन्सेप्ट पर ध्यान देने की ज़रूरत है। इसके साथ यौनिकता शिक्षा, शादी की सही उम्र तथा पहले गर्भधारण का सही समय और दो बच्चों के बीच उचित अन्तराल की जानकारी देना भी आवश्यक है। साथ ही साथ गर्भनिरोध के उपलब्ध इन वर्तमान साधनों (निरोध, ओरल पिल्स, आई.यू.डी.) के प्रचार-प्रसार, उपलब्धता पर ज़्यादा केन्द्रित होकर काम करने की ज़रूरत है।

आज भी ज़रूरी है कि समाज महिलाओं को दोयम दर्जा का नागरिक समझने और बच्चे पैदा करने वाली मशीन समझने जैसी घृणित मानसिकता से बाहर निकले। सम्मान, निजता एवं शारीरिक अखण्डता के महिलाओं के अधिकार सुनिश्चित हों और यौनिक एवं प्रजनन स्वास्थ्य के संदर्भ में महिलाओं के जानकारीयुक्त निर्णय के साथ कोई समझौता न किया जाये। परिवार नियोजन कार्यक्रम पर पुनर्विचार करके "जनसंख्या नियंत्रण" जैसे विपरीत दृष्टिकोण वाली नीतियों को समाप्त करना भी बेहद ज़रूरी है। वैवाहिक स्थिति, उम्र, जेंडर आदि पर बिना ध्यान दिये सभी के लिए गर्भ निरोधक सेवाओं की उपलब्धता, पहुंच और गुणवत्ता सुनिश्चित की जाये। साथ ही यह भी सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि ज़रूरतमंद खुद तय करे कि उसे गर्भनिरोध के कौन से साधन का उपयोग करना है।

संगीता मौर्य *व* ***ईशा सारस्वत,***
सहयोग संस्था के साथ कार्यरत हैं।